International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(6): 230-233

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(6): 230-233
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 16-09-2017
Accepted: 19-10-2017

डॉ० देव निरंजन झा
पूर्व शोध छात्र, संस्कृत विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ० देव निरंजन झा
पूर्व शोध छात्र, संस्कृत विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत

भारतीय धर्म एवं सम्प्रदायः एक समीक्षा

डॉ० देव निरंजन झा

सारांशः
प्राचीन भारत में सामान्य धर्म को ही वास्तविक धर्म माना जाता रहा, किन्तु धर्म का ब्राह्य रूप भी उस समय प्रचलित थे। जिनका विधि–विधान युग–युग में परिवर्तित होता रहता था। इस बाह्य रूप को ही सम्प्रदाय, मत या पन्थ कहा जाता था। परवर्तीकाल में साम्प्रदायिक धर्म को ही प्रमुखता प्राप्त हो गयी और सामान्य धर्म को धर्म न कहकर केवल नैतिकता कहा जाने लगा। इस साम्प्रदायिक धर्म का स्वरूप भारत के वैदिक काल से लेकर आज तक निरन्तर परिवर्तित होता रहा है और उसके विविध रूपान्तर प्रचलित रहे हैं।

प्रस्तावनाः
वैदिकवाङ्मय के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि सामान्य धर्म तथा वैदिक धर्म ज्ञानकाण्ड, भक्तिकाण्ड एवं कर्मकाण्ड प्रधान था। अर्थात् उस काल में देवताओं को सन्तुष्ट करके उनकी कृपा और सहायता प्राप्त करने के लिए विविध प्रकार के यज्ञों का विधान किया जाता था। विभिन्न अवसरों अथवा विभिन्न आकाँक्षाओं की पूर्ति के लिए भिन्न–भिन्न यज्ञ किये जाते थे। राजा के राज्याभिषेक के अवसर पर राजसूय यज्ञ दिग्विजय के रूप में विधान होता था। ब्राह्मण अपने घरों में भी अग्निहोत्र करते थे। इसी तरह विभिन्न देवताओं के लिए भी अलग–अलग यज्ञ होते थे, जैसे इन्द्र–यज्ञ, वरुण–यज्ञ, रुद्र–यज्ञ आदि। वैदिक देवताओं में इन्द्र, अग्नि, वरुण, रुद्र, विष्णु, सोम और मरुत् प्रधान हैं। इनमें से इन्द्र, वरुण, अग्नि और रुद्र को उपास्य देवता मानकर भारत सप्तसिन्धु से लेकर मेसोपोटामिया, लघु एशिया एवं मध्य एशिया तक अनेक सम्प्रदाय बन गये थे। इनमें आर्य गण अग्नि के उपासक, मेसोपोटामिया के असुर गण वरुण के उपासक, सिन्धु घाटी के पाठी रुद्र के उपासक और समत्व प्रदेश या ब्रह्मावर्त के आर्य इन्द्र के उपासक थे। इन चारों देवताओं के अनुयायियों के अलग–अलग सम्प्रदाय हो गये थे। जैसे– अग्निपूजक सम्प्रदाय, वरुणोपासक सम्प्रदाय, रुद्र सम्प्रदाय और ऐन्द्र सम्प्रदाय।

वस्तुतः धर्म मनुष्य की श्रद्धाबोधात्मक प्रवृति का परिणाम है। तर्काश्रित बोध से जिस दार्शनिक चिन्तन की उत्पत्ति होती है, उसी का नाम दर्शन है तथा दर्शन मनुष्य के लिए जो लक्ष्य एवं मार्ग निर्धारित करता है, उसका व्यावहारिक अथवा प्रायोगिक रूप ही धर्म है। इस प्रकार प्रत्येक धर्म का एक दर्शन होता है तथा प्रत्येक दर्शन का सम्बन्ध किसी न किसी धर्म से होता है। इस सम्बन्ध में डॉ. रामजी उपाध्याय का कथन है– [1] 'दर्शन के द्वारा मनुष्य को ज्ञात होता है। जीवन के इन्द्रिय जनित सुखों की परिधि सीमित है और वास्तव में ये सुख स्वर्ग और मुक्ति के आनन्द की तुलना में हीन हैं। प्रत्येक दर्शन स्पष्ट निर्देश करता है कि कुछ कर्मों के फल भोगने के लिए बार–बार इस लोक में जन्म लेना पड़ता है। जीवन के जन्म–मरण के बन्धन से छुटकारा पाने के लिये मानव अपने पुण्यों के द्वारा कुछ समय तक स्वर्ग में रह सकता है पर, पुण्य के क्षीण होने पर फिर इसी बंधन में पड़ता है। सर्वोत्तम है मुक्ति, जिस पद को प्राप्त कर लेने पर पुनः बन्धन असम्भव है। स्वर्ग और मुक्ति की जो कल्पना दर्शन के द्वारा मानव के हृदय में प्रतिष्ठित की गयी है उसके प्रति आकर्षण होना स्वाभाविक है। मानव की इस स्वाभाविक प्रवृत्ति को दृष्टि पथ में रखते हुए विचारकों ने जो योजनाएँ बनायीं; वे धर्म के अन्तर्गत आती हैं। इस योजना के द्वारा निर्णय किया गया है कि विश्व की विविध वस्तुओं के प्रति विविध परिस्थितियों में मानव कैसा व्यवहार करे। धर्म के इस महत्त्वपूर्ण अंग का नाम आचारशास्त्र है।'

वैदिककाल में परलोक सिद्धि के लिये जो कार्य किये जाते थे, उन्हीं का नाम धर्म था। इसके अन्तर्गत सामाजिक संगठन एवं आचार–विचार, उपासना पद्धति, रीति–रिवाज एवं प्रथाएँ आदि सबका समावेश हुआ। परन्तु यह धर्म का शाश्वत् रूप नहीं था। सभी धर्मों के समान वैदिक धर्म उत्तरोत्तर परिवर्तित होता रहा। आज तक उसका रूप न जाने कितनी बार परिवर्तित हो चुका है; फिर भी उसकी मूलधारा अखण्ड रूप से प्रवाहित होती चली आ रही है, जो आज के हिन्दू धर्म की विविध शाखाओं में विद्यमान है।

उत्तर वैदिक कालीन धार्मिक सम्प्रदायः

वैदिककाल के उत्तर भाग में आर्य धर्म विभिन्न सम्प्रदायों में विभक्त हो गया। इस साम्प्रदायिक विभाजन का मुख्य कारण वेदों के यज्ञकाण्ड अथवा कर्मकाण्ड विषयक मतवैभिन्य था। ब्राह्मणग्रन्थों में वेदों के यज्ञभाग सम्बन्धी कर्मकाण्डों का ही विधि–विधान बताया गया है एवं विभिन्न देवताओं से सम्बन्धित कथाएँ दी गयी हैं। उत्तरवैदिक काल में यही कर्मकाण्ड मीमांसादर्शन के अनुरूप ब्राह्मणधर्म के रूप में प्रचलित हुआ, जिसमें वेदों को ही सर्वोपरि प्रमाण माना गया। ठीक इसके विपरीत वेदों के ज्ञानकाण्ड को लेकर आरण्यकों और उपनिषदों की रचना हुई; जिनमें ईश्वरतत्त्व और ब्रह्मवाद की प्रतिष्ठा की गयी। इस प्रकार वेदों के ज्ञानकाण्ड से ही औपनिषदिक धर्म विशेष रूप से प्रचलित हुआ। जिसका आधार वेदान्तदर्शन था। वैदिककालीन यज्ञकाण्ड (कर्मकाण्ड) भी मीमांसादर्शन को आधार बनाकर ब्राह्मणधर्म के रूप में विकसित होता रहा। उपासनाकाण्ड ही वैदिकोत्तरकाल में भागवत् सम्प्रदाय तथा रुद्रसम्प्रदाय के रूप में विकसित हुआ।

वैदिकोत्तरकाल में ब्राह्मणधर्म तथा औपनिषदिक धर्म का साम्प्रदायिक रूप क्रमशः विलीन होता गया और उन दोनों के समन्वय से उपासनाकाण्ड से सम्बन्धित विविध सम्प्रदायों का उद्भव होता गया। ये सम्प्रदाय हैं– भागवत् सम्प्रदाय, पाशुपत सम्प्रदाय (शैव सम्प्रदाय), बौद्धधर्म, जैनधर्म, गाणपत्य सम्प्रदाय तथा सौरसम्प्रदाय।

मध्यकाल (600–1950 ई.) के प्रारम्भ से भारत के प्राचीनधर्मों का रूप तीव्र गति से परिवर्तित होने लगा। इतिहास में उसी काल में अरब में इस्लाम का प्रादुर्भाव हुआ जिसने कुछ शताब्दियों में ही पश्चिमी एशिया के पूर्व प्रचलित धर्मों व सम्प्रदायों का पूर्णतः उच्छेद कर दिया। ईरान का पारसी धर्म और ईराक, तुर्की, सीरिया आदि देशों के ईसाई धर्म का उसी तरह उच्छेद हो गया जिस तरह ईसाई धर्म के प्रचार के साथ पूर्ववर्ती धर्मों का विनाश हुआ। नौवीं शताब्दी में अरबों ने भारत के एक भाग सिन्धु पर भी आक्रमण किया तथ उसे अपने अधिकार में कर लिया। दशवीं शताब्दी से पन्द्रहवीं शताब्दी तक अरब, ईरान, अफगानिस्तान, मध्य एशिया आदि पश्चिमी देशों के इस्लाम धर्मावलम्बी निरन्तर भारत पर आक्रमण एवं लूट–खसोट करते रहे एवं भारत के आर्य धर्मावलम्बी, ब्राह्मण, बौद्ध एवं जैन धर्म के लोगों को बलात् यवन बनाते रहे। मन्दिरों और मठों को तोड़ते रहे तथा अपना राज्य भी स्थापित करते रहे। इस तरह भारत में न केवल मुसलमानी राज्य स्थापित हुआ; बल्कि यहाँ प्रचलित विभिन्न धर्मों और सम्प्रदायों की स्थिति भी बदलती गयी और इस्लाम का तेजी से प्रचार बढ़ता गया।

अरबों ने सिन्ध पर आक्रमण करके सिन्धु नदी को पार किया था; इसलिए वे देश सिन्ध तथा यहाँ के निवासियों को सिन्धु कहने लगे। उच्चारण के मुख सुख नियम के कारण सिन्ध राष्ट्र हिन्द और सिन्धु शब्द हिन्दू बन गया। साथ ही अरब विदेशी आक्रमणकारी भारतीयों के धर्म को भी हिन्दू धर्म कहने लगे। हिन्दू, हिन्दुस्तान और हिन्दू शब्दों का प्रयोग या प्रचलन इसी प्रकार हुआ था। इस प्रकार भारत के सभी धर्मों और सम्प्रदायों का सम्मिलित नाम हिन्दू पड़ गया।

वैदिक कालीन, आर्यधर्म, वैदिकोत्तर बौद्ध युग एवं पौराणिक युग में मुख्यतः जिन चार सम्प्रदायों (बौद्ध, जैन, भागवत, पाशुपत) में विभक्त था; उनमें से बौद्धों और जैनों को छोड़कर शेष सभी आर्य धर्मावलम्बी सम्प्रदाय ही हिन्दू नाम के मुख्य अधिकारी हुए। परिणामतः आर्य धर्म और ब्राह्मण धर्म के स्थान पर 'हिन्दू धर्म' शब्द प्रचलित हुआ जो बौद्ध और जैन धर्मों से अलग अपने अस्तित्व का बोध कराता था।

धर्म के तीन रूप होते हैं– सामान्य धर्म, विशेष धर्म अथवा सम्प्रदाय और लोकधर्म। यदि इस दृष्टि से हिन्दू धर्म के सम्बन्ध में विचार किया जाय तो यह स्पष्ट हो जायेगा, कि वह इस्लाम और ईसाई धर्म के समान संकीर्ण साम्प्रदायिक धर्म नहीं है। साम्प्रदायिक धर्म में एक आराध्य देवता, एक धर्म प्रवर्तक, (पैगम्बर), एक धर्म ग्रन्थ और एक ही उपासनापद्धति, उसमें दीक्षित सभी लोगों के लिये मानना आवश्यक होता है। बौद्ध, जैन, आदि भारतीय साम्प्रदायिक धर्मों तथा इस्लाम, ईसाई, कन्फ्यूसियसताओं आदि विदेशी धर्मों को इसी दृष्टि से साम्प्रदायिक धर्म कहा जा सकता है, किन्तु हिन्दू धर्म को ऐसा नहीं माना जा सकता। हिन्दू धर्म में अनेक सम्प्रदाय और उपसम्प्रदाय हैं जिनमें आराध्य देवता, अथवा मूल प्रवर्तक अलग–अलग हैं। उन सबके धर्मग्रन्थ भी भिन्न–भिन्न हैं, फिर भी वे हिन्दू धर्म के अंग ही माने जाते हैं। इस प्रकार हिन्दू धर्म साम्प्रदायिक धर्म नहीं है बल्कि वह अनेक सम्प्रदायों को सपुंज है। जिसमें बौद्ध, जैन, सिख, शैव, शाक्त, वैष्णव आदि अनेकानेक साम्प्रदायिक धर्म एवं उपसम्प्रदाय सम्मिलित हैं।

सारांश यह है कि प्राचीन वैदिक धर्म की मान्यताओं पर आधारित भारत या भारत के बाहर स्थित वे सभी सम्प्रदाय जो अपने को हिन्दू धर्म में सम्मिलित मानते हैं। हिन्दू धर्म की सीमा में आ जाते हैं। इसके अतिरिक्त हिन्दू धर्म की और कोई परिभाषा युक्तिसंगत नहीं हो सकती; क्योंकि इन सम्प्रदायों अथवा साम्प्रदायिक धर्मों में आराध्य धर्म, प्रवर्तक, धर्मग्रन्थ और उपासनापद्धति सम्बन्धी एकता नहीं है। इस दृष्टि से हिन्दू धर्म को सामान्य धर्म ही कहा जा सकता है; जिस पर मनुस्मृति के धर्म सम्बन्धी दस लक्षण लागू होते हैं। [2]

यद्यपि ये लक्षण समस्त मानव जाति में तथा धर्मों के मानव धर्म अथवा नैतिक मूल्यों के रूप में मान्य है किन्तु हिन्दू धर्मावलम्बियों में ये गुण अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। सभी भारतीय पौराणिक कथाओं में तथा काव्य एवं कला में इन्हीं लक्षणों के आदर्श चित्रित किये गये हैं। सामान्य हिन्दू जनता भी सत्य, अंहिसा, अस्तेय आदि को ही धर्म कहती है। धर्म के इन सामान्य लक्षणों की सम्यक् प्रतिष्ठा होने के बाद भी हिन्दू धर्म में जो विविध सम्प्रदाय हैं वे अपनी अलग–अलग विशेषताएँ भी रखते हैं। अतः यहाँ संक्षेप में उनके सम्बन्ध में भी विचार कर लेना आवश्यक है।

इन सभी सम्प्रदायों को मुख्यतः चार वर्गों में विभक्त किया जा सकता है– निर्गुण मतवादी सम्प्रदाय, सगुण मतवादी वैष्णव सम्प्रदाय, शैव सम्प्रदाय, शाक्त सम्प्रदाय, आधुनिक सुधारवादी सम्प्रदाय। इनमें से जो सम्प्रदाय हिन्दी भाषाभाषी क्षेत्रों प्रचलित थे अथवा हिन्दीतर क्षेत्रों में प्रचलित होते हुए, भी जिनमें सम्बद्ध कवियों ने हिन्दी में काव्य रचनाएँ की हैं या जिनका प्रभाव हिन्दी क्षेत्र में स्थित सम्प्रदायों पर पड़ा है उनका विवरण निम्नलिखित है–

1. निर्गुणमतवादी सम्प्रदाय–

इस सम्प्रदाय में पौराणिक अवतारवाद को अस्वीकार करके निर्गुणब्रह्म को मान्यता दी गई है। भारत में निर्गुणसाधना से सम्बन्धित अनेक सम्प्रदायों का प्रवर्तन हुआ जिनमें से निम्नलिखित प्रमुख हैं–

- नाथसम्प्रदाय– नाथसम्प्रदाय के प्रवर्तक यद्यपि गोरखनाथ थे; किन्तु इस सम्प्रदाय में यह मान्यता प्रचलित है कि नौ नाथों में स्वयं शिव थे जिन्होंने इस सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया था। इस सम्प्रदाय के दर्शन के सम्बन्ध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है– [3] 'गोरखनाथ और उनके द्वारा प्रभावित योगमार्गीय ग्रन्थों के अवलोकन से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि गोरखनाथ ने योगमार्ग को एक बहुत ही व्यवस्थित रूप दिया है। उन्होंने शैव प्रत्यभिज्ञा दर्शन के सिद्धान्तों के आधार पर बहुधा विसुप्त कायायोग के साधनों को व्यवस्थित किया है।'
- सिक्खसम्प्रदाय– इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक गुरुनानक थे; जिनका प्रादुर्भाव पन्द्रहवीं शताब्दी के उतरार्द्ध में पंजाब में हुआ था। गुरुनानक की शिष्यपरम्परा में नौ गुरु हुए और गुरुनानक को मिलाकर दस गुरु माने जाते हैं। जिनकी उपदेशात्मक रचनाओं का नाम गुरुग्रन्थसाहब है। यह सम्प्रदाय हिन्दू धर्म का ही एक अंग है।
- कबीरपन्थ– इसके प्रवर्तक कबीर थे। कबीर स्वामी रामानन्द के शिष्य थे। किन्तु कबीर ने स्वतंत्र रूप से अपने दर्शन और भक्तिसाधना का विकास किया था। ये अवतारवाद, मूर्ति पूजा,

वेद प्रमाण, वर्ण व्यवस्था धार्मिक पाखण्ड आदि के विरोधी थे और ज्ञानयोग तथा भक्ति का समन्वय करके सीधी और सरल भक्ति साधना में विश्वास करते थे। [4]

- रैदासीसम्प्रदाय– इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक रैदास थे। रैदास के पदों में अद्वैत वेदान्त, नाथपन्थ तथा वैष्णव भक्ति मार्ग का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है। इन सम्प्रदायों के अतिरिक्त निर्गुण मत को मानने वाले और भी कई सम्प्रदाय हैं, जिनमें से 'सूफी सम्प्रदाय' 'बावरी पन्थ', 'धरनीश्वरी सम्प्रदाय', 'चरणदासी सम्प्रदाय', 'पानप पन्थ', 'राम सनेही सम्प्रदाय', 'अघोरी सम्प्रदाय', 'साध सम्प्रदाय', 'साहिब पन्थ', 'लाल पन्थ', 'प्रणामी सम्प्रदाय' आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

2. सगुणमतवादी सम्प्रदाय–

सगुणमतवादी वैष्णवभक्ति का प्रारम्भ ईसवी सन् के पूर्व ही भागवत सम्प्रदाय द्वारा हुआ था। यह भक्ति इस पौराणिक मान्यता पर आधारित थी, कि भगवान् विष्णु पृथ्वी का भार हरण करने और धर्म का उत्थान करने के लिए अवतार ग्रहण करते हैं। गीता इसका साक्ष्य प्रस्तुत करती है–[5]

'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृज्याम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भावामि युगे युगे।।'

इसी सिद्धान्त के अनुसार पौराणिक हिन्दू धर्म में यह मान्यता प्रचलित हुई कि भगवान् विष्णु ने अवतार ग्रहण किये थे और इन्ही अवतारों में भगवान् श्रीराम और श्रीकृष्ण को आराध्य रूप में मानकर विभिन्न वैष्णव सम्प्रदायों का उद्भव हुआ। जैसे– रामानुजाचार्य का विशिष्टाद्वैतवादी श्रीसम्प्रदाय, मध्वाचार्य का द्वैतवादी ब्रह्मसम्प्रदाय, द्वैताद्वैतवादी निम्बार्कसम्प्रदाय, और शुद्धद्वैतवादी वल्लभसम्प्रदाय।

इन वैष्णव सम्प्रदायों ने समस्त भारत में वैष्णव भक्ति आन्दोलन ने चलाया, जिसके परिणाम स्वरूप श्रीराम और श्रीकृष्ण की उपासना सामान्य जनता में प्रचलित हो गयी। उपासना की विधियों में अन्तर होने के कारण अनेकानेक कृष्णोपासक एवं रामोपासक सम्प्रदाय बन गये; जिनका संक्षिप्त विवरण आगे दिया जा रहा है–

- दक्षिण का आलवार सम्प्रदाय– मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन का सूत्रपात सर्वप्रथम दक्षिण भारत में हुआ था। वहाँ जिन अब्राह्मण सन्तों ने इस आंदोलन को आगे बढ़ाया उन्हें 'आलवार' कहा जाता है। इनकी साधना के सम्बन्ध में आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने लिखा–[6] 'आलवारों ने अपनी भक्ति के लिए सख्य, वात्सल्य तथा माधुर्य नामक तीनों भावों को साधन बनाया और नम तथा आंडाल ने अपने पदों में माधुर्य को अपनाया था। इनकी रचनाओं द्वारा प्रदर्शित भक्ति के अन्तर्गत जीवात्मा या परमात्मा के मध्य एक अलौकिक प्रेम का अंश भी विद्यमान है जिसे आलंकारिक भाषा में 'सहवास का प्रेम' कह सकते है।'
- रामावत सम्प्रदाय– रामानुजाचार्य की शिष्य परम्परा में 13वीं शताब्दी के अन्त में स्वामी रामानन्द हुए, इन्होंने ही इस सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया। तुलसीदास इन्हीं की परम्परा में थे। इस सम्प्रदाय के अनुयायी वैरागी कहलाते थे। रामानन्दी वैरागियों ने देशभर में अपने मठ स्थापित किये। इनके मुख्य केन्द्र अयोध्या, चित्रकूट, मिथिला और राजस्थान में भी थे।
- गौड़ी वैष्णव सम्प्रदाय– इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक बंगाल के प्रसिद्ध भक्त महाप्रभु चैतन्य (1386–1533 ई.) थे। चैतन्य महाप्रभु ने जातिभेद का विरोधकर मानव मन की एकता का प्रतिपादन किया और बाह्याचार तथा कर्मकाण्डों का विरोध करके भगवान् श्रीकृष्ण की मधुरभक्ति और नामसंकीर्तन का उपदेश दिया। उनके मत के अनुसार परम सुन्दर श्रीकृष्ण ही परब्रह्म है। इस जगत में एक मात्र पुरुष वही हैं और अन्य सभी जीव स्त्री हैं।
- राधावल्लभीय सम्प्रदाय– इस सम्प्रदाय की स्थापना गोस्वामी हित हरिवंश (सन् 1502–1552 ई.) ने की थी। श्रीराधा ही इस सम्प्रदाय की उपास्य देवी हैं, श्रीकृष्ण केवल राधा के प्रियतम होने के कारण मान्य हैं। इस सम्प्रदाय के भक्त राधाजी की सखियों से राधा की कृपा प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करते हैं।
- टट्टी सम्प्रदाय– इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक सुप्रसिद्ध मध्य कालीन संगीतज्ञ स्वामी हरिदास जी थे; जो अकबर के समकालीन थे। यह सम्प्रदाय निम्बार्क सम्प्रदाय की ही एक शाखा है।
- बारकरी सम्प्रदाय– 14वीं शताब्दी तक इस सम्प्रदाय में यद्यपि विट्ठलोपासना प्रचलित थी, किन्तु उस पर योग मार्ग और निगुर्ण साधना का प्रभाव था। इसके पश्चात यह सम्प्रदाय अधिकाधिक वैष्णव भक्ति साधना की ओर झुकता गया। महाराष्ट्र के ज्ञानेश्वर एवं नामदेव इसके प्रमुख संत थे हुए हैं।
- रामदासी सम्प्रदाय– सत्रहवीं शताब्दी में महाराष्ट्र में राम और हनुमान की उपासना का व्यापक प्रचार करने वाले संत समर्थ गुरु रामदास थे। उन्होंने ही इस सम्प्रदाय की स्थापना की।
- महापुरुष सम्प्रदाय– आसाम में शंकर देव (सन् 1448–1568) ने वैष्णव भक्ति का सूत्रपात किया। उनका सम्प्रदाय महापुरुषी सम्प्रदाय कहलाया। वे मूर्ति पूजा, संन्यास, तांत्रिक साधना आदि के विरोधी थे।
- सहजिया वैष्णवसम्प्रदाय– इस सम्प्रदाय के मान्य कवि चंडीदास हैं। यह सम्प्रदाय बौद्ध सहजयान की तंत्र साधना तथा श्रीमद्भागवत् की प्रेम साधना का समन्वित रूप है। इसमें रामानुरागी प्रेम भक्ति मान्य है। सहजिया सम्प्रदाय मनुष्य को ही अधिक महत्व देता है, क्योंकि मनुष्य के भीतर ही श्रीकृष्ण रूपी आध्यात्मिक तत्व विद्यमान है।
- शैवसम्प्रदाय– मध्यकाल में पौराणिक धर्म का प्रचलन होने पर वैष्णव पुराणों के समान ही शैवपुराणों का भी प्रादुर्भाव हुआ, जिनके आधार पर शिव की उपासना से सम्बन्धित कई सम्प्रदाय विकसित हुए, जिनमें से कुछ प्रमुख हैं–

1. कापालिक और कालामुख सम्प्रदाय – शैव सम्प्रदाय की एक शाखा ही मध्यकाल में कापालिक नाम से प्रसिद्ध हुई। कापालिकों का यह मत है कि 'जो छह मुद्रिकाओं का तत्वज्ञ है तथा उनके प्रयोग में विशारद है, वह भगवान पर बैठकर आत्मा का ध्यान करता हुआ निर्वाण प्राप्त करता है। वे छह मुद्राएँ हैं– कंठिका, रुचक, कुण्डल, शिखामणि, भस्म, यज्ञोपवीत। जो अपने शरीर पर इन मुद्रिकाओं को धारण करता है, वह जन्म–मरण से मुक्त हो जाता है।' [7]
2. कश्मीरी शैवसम्प्रदाय– यह सम्प्रदाय कश्मीर में प्रचलित था। जिसकी दो शाखाएँ थीं– स्पन्द शास्त्रशाखा और प्रत्यभिज्ञा शास्त्रशाखा। स्पन्दशास्त्र के प्रवर्तक वसुगुप्त और प्रत्यभिज्ञा शास्त्रशाखा के सोमानन्द थे।
3. वीर शैव लिंगायत सम्प्रदाय– इस सम्प्रदाय की स्थापना बसव ने बारहवीं शताब्दी में की थी। इसका प्रचार दक्षिण भारत, विशेषकर कर्नाटक व तमिलनाडु में है। इसका दर्शन वेदान्त से प्रभावित है।
4. शाक्त सम्प्रदाय– शाक्त सम्प्रदाय का सम्बन्ध शक्ति (देवी) की उपासना से है। शैव सम्प्रदाय में शिव की शक्ति को ही चित्ति या महाचित्ति कहा गया है। यही देवी दुर्गा है, जिनकी उपासना इस सम्प्रदाय में प्रचलित है। दुर्गा सप्तशती में शक्ति के नौ रूप माने गये हैं। जिनके नाम हैं– शैलीपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कूष्माण्डा, स्कन्दमाता, कात्यायनी, कालरात्रि, महागौरी, सिद्धिदात्री।' [8] इन्हीं को नवदुर्गा कहा जाता है। शाक्ततन्त्र में शक्ति के अन्य नाम भी प्रचलित है जिनमें से आनन्द भैरवी या त्रिपुर सुन्दरी, ललिता नाम प्रमुख है। शक्ति के विभिन्न रूपों की उपासना इस सम्प्रदाय से सम्बन्धित है।

5. आधुनिक सुधारवादी सम्प्रदाय– भारत में विभिन्न युगों में धार्मिक एवं सामजिक रूढ़ियों के विरोध में नये–नये आन्दोलन खड़े होते रहे हैं। जिनमें आधुनिक युग आर्य समाज एवं ब्रह्म समाज के नाम उल्लेखनीय रहे हैं।

- आर्यसमाज– आर्यसमाज की स्थापना स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सन् 1875 में की थी। इस सम्प्रदाय का सर्वमान्य धार्मिक ग्रन्थ स्वामी दयानन्द द्वारा लिखित 'सत्यार्थ प्रकाश' है। आर्यसमाज पौराणिक मान्यताओं को मिथ्या तथा बहुदेववाद और मूर्ति पूजा को पाखण्ड समझता है।
- ख. ब्रह्मसमाज– ब्रह्म समाज की स्थापना सन् 1828 में बंगाल में राजा राममोहन राय ने की थी। बंगाल में ईसाई धर्म के बढ़ते हुए प्रभाव को रोकने के लिए बंगालियों के एक शिक्षित वर्ग द्वारा पौराणिक धर्म के अंधविश्वासों एवं रूढ़ियों का खंडन करते हुए एक बुद्धिवादी और सुधारवादी धार्मिक सम्प्रदाय का गठन हुआ। इस सम्प्रदाय ने मूर्तिपूजा, जातिवाद एवं छुआछूत आदि का खंडन किया।

निष्कार्षः

वैदिककाल के उत्तर भाग में आर्य धर्म विभिन्न सम्प्रदायों में विभक्त हो गया। इस साम्प्रदायिक विभाजन का मुख्य कारण वेदों के यज्ञकाण्ड अथवा कर्मकाण्ड विषयक मतवैभिन्य था। ब्राह्मणग्रन्थों में वेदों के यज्ञभाग सम्बन्धी कर्मकाण्डों का ही विधि–विधान बताया गया है एवं विभिन्न देवताओं से सम्बन्धित कथाएँ दी गयी हैं। उत्तरवैदिक काल में यही कर्मकाण्ड मीमांसादर्शन के अनुरूप ब्राह्मणधर्म के रूप में प्रचलित हुआ, जिसमें वेदों को ही सर्वोपरि प्रमाण माना गया। ठीक इसके विपरीत वेदों के ज्ञानकाण्ड को लेकर आरण्यकों और उपनिषदों की रचना हुई; जिनमें ईश्वरतत्त्व और ब्रह्मवाद की प्रतिष्ठा की गयी। इस प्रकार वेदों के ज्ञानकाण्ड से ही औपनिषदिक धर्म विशेष रूप से प्रचलित हुआ। जिसका आधार वेदान्तदर्शन था। वैदिककालीन यज्ञकाण्ड (कर्मकाण्ड) भी मीमांसादर्शन को आधार बनाकर ब्राह्मणधर्म के रूप में विकसित होता रहा। उपासनाकाण्ड ही वैदिकोत्तरकाल में भागवत् सम्प्रदाय तथा रुद्रसम्प्रदाय के रूप में विकसित हुआ।

वैदिकोत्तरकाल में ब्राह्मणधर्म तथा औपनिषदिक धर्म का साम्प्रदायिक रूप क्रमशः विलीन होता गया और उन दोनों के समन्वय से उपासनाकाण्ड से सम्बन्धित विविध सम्प्रदायों का उद्भव होता गया। ये सम्प्रदाय हैं– भागवत् सम्प्रदाय, पाशुपत सम्प्रदाय (शैव सम्प्रदाय), बौद्धधर्म, जैनधर्म, गाणपत्य सम्प्रदाय तथा सौरसम्प्रदाय।

सन्दर्भ–सूचीः

1. प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका, पृ.– 406
2. मनुस्मृति– 6.92
3. नाथसम्प्रदाय, पृ.– 12
4. कबीर, पृ.– 15
5. श्रीमद्भगवदगीता– 4.4, 7–8
6. उत्तरी भारत की संतपरम्परा, पृ.– 87
7. वैष्णव शैव और अन्य धार्मिक मत, पृ.– 145
8. दुर्गासप्तशती, देवीकवच– 3–5